INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 16 | ISSUE - 2 | MARCH – 2026

जयशंकर प्रसाद के विभिन्न नाटकों में ऐतिहासिकता का अध्ययन

चन्द्र कान्त शुक्ल
हिन्दी विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सारांश –

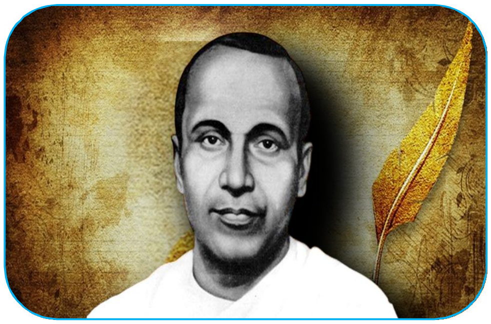

इतिहास में घटनाओं की प्रायः पुनरावृत्ति होते देखी जाती है। इसका तात्पर्य यह नही कि इसमें कोई नयी घटना होती ही नहीं किन्तु असाधारण नयी घटना भी भविष्य में फिर होने की आशा रखती है। मानव समाज की कल्पना का भण्डार अक्षय है क्योंकि वह इच्छा शक्ति का विकास है। इन कल्पनाओं और इच्छाओं का मूलसूत्र बहुत ही सूक्ष्म और अपरिस्फुट होता है। जब वह इच्छा शक्ति किसी व्यक्ति या जाति में केन्द्रीभूत होकर अपना सफल या विकसित रूप धारण करती है तभी इतिहास की सृष्टि होती है। विश्व में जब तक कल्पना इच्छा–शक्ति को नहीं प्राप्त होती, तब तक वह रूप परिवर्तन करती हुई पुनरावृत्ति करती ही जाती है। समाज की अभिलाषा अनंत स्रोत पर भी आधारित है। पूर्व कल्पना के पूर्ण होते–होते एक नयी कल्पना उसका विरोध करने लगती है और पूर्व कल्पना कुछ काल तक ठहरकर फिर जागृत होने के लिए अपना क्षेत्र प्रस्तुत करती है। इधर इतिहास का नवीन अध्ययन धुलने लगता है। जयशंकर प्रसाद के विभिन्न नाटकों में ऐतिहासिकता निम्नवत् रूप में वर्णित की गयी है।

मुख्य शब्द – इतिहास, घटना, नाटक, समाज एवं जयशंकर प्रसाद।

प्रस्तावना –

प्रसाद जी के ऐतिहासिक नाटकों का आधार यद्यपि इतिहास रहा है, तथापि यह निर्विवाद सत्य है कि ऐतिहासिक नाटक इतिहास न होकर साहित्य की कोटि में आता है।[1] इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐतिहासिक नाटककार अपनी सामग्री का चयन इतिहास से करता है, किन्तु वह उसे कलात्मक रूप प्रदान करने हेतु उसमें कल्पना का समुचित समावेश भी करता है।[2] वास्तव में, ऐतिहासिक तथ्यों को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए कल्पना का संतुलित एवं यथार्थ प्रयोग अत्यन्त आवश्यक होता है।[3]

यह स्वीकार करना भी आवश्यक है कि ऐतिहासिक सत्य में अनावश्यक परिवर्तन उचित नहीं है, किन्तु नाटकीय आवश्यकता के अनुसार सीमित परिवर्तन अपरिहार्य हो जाता है।[4] अतः यह मत भी तर्कसंगत नहीं कहा जा सकता कि इतिहास में किसी भी परिस्थिति में परिवर्तन नहीं होना चाहिए। तथापि, जो घटनाएँ और तथ्य अत्यधिक प्रसिद्ध एवं प्रमाणित हैं, उनमें परिवर्तन वांछनीय नहीं माना जाता।[5]

केवल घटनाओं एवं तिथियों का संकलन इतिहास नहीं कहलाता, अपितु इतिहास के निर्माण में देश, काल, समाज एवं परिस्थितियों की समग्र पृष्ठभूमि का समावेश अनिवार्य होता है।[6] इतिहासकार को घटनाओं के पीछे निहित कार्य–कारण संबंधों का अन्वेषण करना पड़ता है, और यही कार्य–कारण संबंधों की खोज ऐतिहासिकता का मूल तत्व है।[7] ऐसी ऐतिहासिकता के अंतर्गत न केवल नाटक का उद्देश्य स्पष्ट होता है, बल्कि इतिहास–दृष्टि भी परिलक्षित होती है।

इतिहास, ऐतिहासिक नाटक का अविच्छिन्न अंग है तथा उसका सम्बन्ध किंवदन्तियों से नहीं, बल्कि प्रमाणित तथ्यों से होता है।[8] यदि कोई नाटककार किंवदन्तियों अथवा पौराणिक आख्यानों को कथावस्तु के रूप में ग्रहण करता है, तो उसे उनके ऐतिहासिक आधार को प्रमाणित करना आवश्यक हो जाता है।[9] ऐतिहासिक नाटककार अपनी कल्पना के माध्यम से घटनाओं को सजीवता प्रदान करता है तथा पात्रों के चरित्र को उभारने का प्रयास करता है।[10] चरित्र–चित्रण की सफलता ही उसके नाट्य–कौशल की कसौटी मानी जाती है।

सामान्यतः नाटककार ऐतिहासिक वृत्तांतों की अपेक्षा प्रमुख ऐतिहासिक पात्रों पर अधिक प्रकाश डालता है, जिससे दर्शक के साथ तादात्म्य स्थापित किया जा सके।[11] इतिहास–प्रसिद्ध पात्रों के प्रति दर्शकों के मन में पूर्व से ही श्रद्धा, प्रेम, घृणा या करुणा जैसे भाव विद्यमान रहते हैं, जिसके कारण नाटककार को पात्र–परिचय देने की आवश्यकता नहीं पड़ती।[12] इस प्रकार दर्शक स्वतः ही ऐतिहासिक संदर्भों से जुड़ जाता है और नाटक की प्रभावशीलता में वृद्धि होती है।

विश्लेषण –

ऐतिहासिक नाटककार इतिहास के प्रख्यात सत्य की रक्षा करने को बाध्य होता है, किन्तु ऐसा करते हुए वह मूल कथानक में परिवर्तन भी कर सकता है, किन्तु यदि कथानक में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता हो, तो ऐतिहासिक तथ्य पर कल्पना का आवरण तभी चढ़ाया जाता है, जब चरित्रों में इतनी शक्ति हो कि वे अपने व्यक्तित्व से सम्पूर्ण कथानक पर छा जाये। ऐसे परिवर्तन उपस्थित करने में जो कुछ भी तत्व–तथ्य हो उसकी प्रधानता होना आवश्यक है। तभी वह नाटक की ऐतिहासिकता का नष्ट किए बिना अपने तत्वों को अपने अधीन कर सकता है। ऐतिहासिक नाटक के उपर्युक्त स्वरूप एवं रचना तन्त्र की विशेषता को ध्यान में रखते हुए यदि उसकी परिभाषा भी देनी हो तो यह कहा जा सकता है कि – ''ऐतिहासिक नाटक, नाटक के शरीर में इतिहास के प्राणों का सार है तथा इतिहास ऐतिहासिक नाटक का अविच्छिन्न अंग है।''

ऐतिहासिक नाटकों के सन्दर्भ में विद्वानों ने ऐतिहासिक नाटकों में तीन प्रधान तत्वों का होना अनिवार्य माना है –

(क) इतिहास
(ख) ऐतिहासिक वातावरण
(ग) ऐतिहासिक घटना तथा पात्र।

प्रसाद जी के अधिकांश रूपक ऐतिहासिक हैं, अतएव बहुत दिनों से आवश्यकता इस बात की दिखाई पड़ रही थी कि उन नाटकों के वस्तु विस्तार में आए हुए ऐतिहासिक पात्रों एवं मूल घटनाओं का ऐसा परिचय दिया जाय कि इतिहास के साथ उनकी संगति स्थापित की जा सकें। परन्तु उपलब्ध इतिहास–ग्रन्थ इस विषय में पर्याप्त नहीं हैं, क्योंकि वे प्रायः मुख्य व्यक्तियों से सम्बद्ध मुख्य कार्य व्यापार और वस्तु स्थिति का ही उल्लेख करते हैं। नाटककार प्रसाद ने वस्तु–संविधान और चरित्र–चित्रण में इतिहास–सम्मत सूक्ष्मातिसूक्ष्म घटनाओं का भी उल्लेख किया है और ऐसी प्रासंगिक घटनाओं एवं परिस्थितियों का विवरण किसी एक ही इतिहास ग्रन्थ में पाना प्रायः सम्भव नहीं। ऐसी अवस्था में यदि कोई उनकी कृतियों का पूर्ण आस्वादन करना चाहे तो उसके लिए इतिहास के अगाध सागर में बिखरी सामग्री का समुद्धार और उसका प्रमाणिक ज्ञान अपेक्षित होगा।

वर्गीकरण की दृष्टि से चार प्रकार के ऐतिहासिक नाटक मिलते हैं –

(क) शुद्ध ऐतिहासिक
(ख) अर्द्ध ऐतिहासिक
(ग) कल्पना जनित ऐतिहासिक
(घ) स्वच्छन्द ऐतिहासिक

जब नाटककार अपने नाटक का कथानक इतिहास से ले तथा उस नाटक के सभी पात्र यदि इतिहास विश्रुत हो, तो ऐसे नाटक को शुद्ध ऐतिहासिक नाटक की संज्ञा दी जा सकती है।

अर्द्ध ऐतिहासिक नाटक उसे कहा जाता है, जिसमें नाटककार मूल कथानक तो इतिहास से लेता है, किन्तु अपनी कल्पना के द्वारा प्रधान पात्रों की सृष्टिकर उन्हें इतिहास पर आरोपित करता है।

कल्पना जनित ऐतिहासिक नाटक उसे कहते हैं, जिसमें नाटक की पूर्णता होने से ठीक पहले एवं मूल कथानक का चित्र उपस्थित कर दिया जाय तथा ऐतिहासिक सन्दर्भ की सुन्दर परिकल्पना के साथ झांकी प्रस्तुत कर दी जाय।

स्वच्छन्द ऐतिहासिक नाटकों में न तो कथानक का इतिहास से कोई सम्बन्ध होता है और न ही पात्रों का। ऐतिहासिक का भ्रमजाल फैलाने में जो तत्व सक्रिय रूप से सामने आता है, वह है ऐतिहासिक वातावरण/पात्र ऐतिहासिक वातावरण में ही अपना कार्य सम्पादित करने की चेष्टा करते हैं, किन्तु वे ऐतिहासिक नहीं होते। अपनी कल्पना के द्वारा ही लेखक यह दिखलाने की चेष्टा करता है कि पात्रों का चारित्रिक विकास ऐतिहासिक वातावरण में हो रहा है किन्तु सच्चाई यह है कि स्वयं नाटककार उन घटनाओं अथवा वातावरण से प्रभावित नहीं होता। हाँ ऐतिहासिक पुट देने के लिए नाटककार इतिहास विश्रुत पात्र सम्बन्ध दिखला देता है।

वर्गीकरण की दृष्टि से प्रसाद जी के नाटकों को दो भागों में बांटकर अध्ययन के विषय बनाये गये हैं –

(क) शुद्ध ऐतिहासिक
(ख) अर्द्ध ऐतिहासिक।

राज्यश्री, अजातशत्रु, स्कन्दगुप्त, चन्द्रगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी प्रसाद जी के शुद्धि ऐतिहासिक नाटक है। इन नाटकों के प्रणयन के पूर्व प्रसाद जी ने इतिहास का अध्ययन किया और अतीत के जिन मोहक चित्रों से उनकी आत्मा को परिशान्त मिली, उसे उन्होंने अपने साहित्य का आधार बनाया। शुद्ध ऐतिहासिक का यह अर्थ नहीं है कि प्रसाद के ये नाटक शुद्ध रूप से इतिहास ही है। न तो नाटक इतिहास हो सकता है और न ही ऐतिहासिक तिथियां नाटक। कलाकार इतिहास से तथ्य लेकर उसमें अपने मन की माधुरी मिलाता है। इस समिश्रण से संभावना की सृष्टि होती है। प्रसाद जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटककार है। भारत के स्वार्णिम अतीत को अपने नाटकों की कथावस्तु बनाकर उन्होंने एक ओर तो भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों को महत्व दिया तथा दूसरी ओर ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आधार ग्रहण करते हुए अतीत के पट पर वर्तमान का चित्र अंकित किया।

प्रसाद जी के नाटकों मे इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय हुआ है। प्रसाद जी के नाटकों में अतीत के प्रति आस्था, वर्तमान के प्रति असन्तोष और भविष्य के लिए आशा–किरण दिखाई पड़ती है। जयशंकर प्रसाद निराशावादी नहीं थे, इसीलिए उन्होंने विपन्नावस्था में भी आशा का संचार किया है। इनके नाटकों के कथानकों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वर्तमान के प्रति विह्वलता व्यक्त करते हुए भी प्रसाद जी ने आशा का संचार अवश्य किया है।

प्रसाद जी जिस समय अपने नाटक लिख रहे थे, उस समय सम्पूर्ण भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन अपने शौर्य पर था। इतिहास की तिथियाँ नाटकों के ऐतिहासिक तिथियों से अधिकाधिक मेल खाती है। व कुछ तिथियों की मेल न खाने का मुख्य कारण विभिन्न इतिहासों में तिथियाँ एक नहीं अनेक मिलती हैं। प्रसाद जी रामायण और महाभारत दोनों को त्रासदी मानते हैं। वस्तुतः बौद्धों के दुःखवाद को वे वैकल्प मन का परिणाम मानते हैं, इसीलिए रामायण को आदर्शवादी चरित्र प्रधान, मर्यादावादी कृति के रूप में आदर्शोन्मुख और महाभारत को व्यक्ति वैचित्र्य तथा यथार्थ की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानते हैं, इन दोनों ही त्रासद कृतियों को प्रसाद जी 'बुद्धिवाद का मनुष्य की स्वनिर्भरता का, उसके गर्व प्रदर्शन का' प्रमाण मानते हैं। प्रसाद जी विषमता और उससे उत्पन्न दुख को उस परमशक्ति 'भूमा' का वरदान मानते हैं, अभिशाप नहीं, ठीक इसी प्रकार से प्रसाद जी ने अपने ऐतिहासिक नाटकों की सृष्टि की।

'विशाख' और 'जनमेजय' का नागयज्ञ अर्द्ध ऐतिहासिक नाटक है। विशाख की कथावस्तु का आधार कल्हण की 'राजतरंगिणी' है। राजतरंगिणी के प्रारंभिक अंश के इतिवृत्त को प्रसाद जी ने संभाव्यता की तुला पर कसा है। चूंकि कल्हण की राजतरंगिणी ही स्वयं इतिहास की शुद्ध कृति नहीं, इसलिए उसकी ऐतिहासिकता से पृथकता भी अकाट्य नहीं।

'जनमेजय का नागयज्ञ' वस्तुतः पूर्वजों के प्रति श्रद्धाभाव की अभिव्यक्ति है। राजा भागीरथ ने अपने पूर्वजों के उद्धार के लिए तपस्या कर गंगा को पृथ्वी पर अवतरित कराया था, ताकि उनके पूर्वजों को मोक्ष की प्राप्ति हो सके। इस उद्देश्य में पवित्रता, सौम्य, शान्ति एवं गंभीरता है। नागयज्ञ में जनमेजय को शान्ति तो नहीं झलकती, किन्तु उसे उच्छृंखल भी नहीं कहा जा सकता किन्तु यह ऐतिहासिक के साथ–साथ पौराणिक नाटक है।

प्रसाद जी ने अतीत के अन्तराल से अपने नाटकों के लिए सामग्री चुनी। इनके नाटकों में महाभारत काल से लेकर हर्षकाल तक का कथावस्तु मिलती है। इनके नाटकों मे इतिहास की घटनायें साहित्यिक आवरण में आई है। इस ऐतिहासिक युग में कई सामाजिक, राजनीतिक क्रान्ति उत्पन्न हुई और आपस में टकराई। उन्होंने भारतीय गौरव ग्रन्थों के आधार पर ऐतिहासिक खोज की है। पुराण, शिलालेख, कौटिल्य का अर्थशास्त्र, कथा सरित्सागर, राजतरंगिणी, प्राचीन ग्रन्थ, महाभारत, उपनिषद, वेद आदि से भारत के दीर्घ–कालीन स्वर्णिम इतिहास का दिग्दर्शन इन्होंने अपने नाटकों में कराया है।

प्रसाद जी ने तेरह नाटक लिखें, जिनमें तीन नाटक पौराणिक काल के हैं। आठ ऐतिहासिक नाटक है तथा दो रूपकात्मक नाटक हैं। इसके अतिरिक्त प्रसाद जी ने तीन और नाटक यशोधर्म देव, अग्निमित्र एवं इन्द्र लिखे जो कि अधूरा ही रह गया। 'इन्द्र' का तो केवल संयोजन मात्र ही हो सका।

निष्कर्ष:

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रसाद जी ने अपने नाटकों की रचना में ऐतिहासिक तथ्यों को अत्यंत गंभीरता और प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है। उन्होंने उपलब्ध ऐतिहासिक स्रोतों, अभिलेखों और परंपरागत मान्यताओं का सूक्ष्म अध्ययन करके अपनी कथावस्तु का निर्माण किया। उनके नाटकों में इतिहास केवल पृष्ठभूमि मात्र नहीं है, बल्कि वह कथा के विकास का प्रमुख आधार बनकर उभरता है। इस कारण उनके नाटकों में घटनाओं, पात्रों और परिस्थितियों का चित्रण विश्वसनीय एवं प्रभावशाली प्रतीत होता है, जिससे पाठक और दर्शक दोनों को ऐतिहासिक यथार्थ का सजीव अनुभव होता है। साथ ही, प्रसाद जी ने नाटकीयता और कलात्मकता को बनाए रखने के लिए आवश्यकतानुसार कल्पना का भी सहारा लिया है, किंतु यह कल्पना कभी भी ऐतिहासिक सत्य से विमुख नहीं होती। उन्होंने कथावस्तु की मांग के अनुरूप काल्पनिक तत्वों का समावेश इस प्रकार किया है कि वे इतिहास के मूल स्वरूप को और अधिक सशक्त तथा रोचक बना दें। इस संतुलन के कारण उनके नाटक न केवल साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध हैं, बल्कि ऐतिहासिक चेतना को जागृत करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संदर्भ –

---

[1] प्रसाद, जयशंकर – नाट्य–कृतियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001, पृष्ठ 45

[2] शुक्ल, रामचन्द्र – हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 2005, पृष्ठ 312

[3] द्विवेदी, हजारी प्रसाद – साहित्य और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 118

[4] सिंह, नामवर – इतिहास और आलोचना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ 76

[5] सिंह, नामवर – इतिहास और आलोचना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ 79

[6] कार, ई. एच. – व्हाट इज हिस्टरी, पेंगुइन बुक्स, लंदन, 1961, पृष्ठ 101

[7] कार, ई. एच. – व्हाट इज हिस्टरी, पेंगुइन बुक्स, लंदन, 1961, पृष्ठ 105

[8] थापर, रोमिला – प्राचीन भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ 52

[9] थापर, रोमिला – प्राचीन भारत का इतिहास, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ 55

[10] वाजपेयी, नन्ददुलारे – हिंदी नाटक और रंगमंच, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1998, पृष्ठ 134

[11] वाजपेयी, नन्ददुलारे – हिंदी नाटक और रंगमंच, राजपाल एंड संस, दिल्ली, 1998, पृष्ठ 138

[12] शर्मा, रामविलास – भारतीय साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ 89